ब्याज अद्यतन के साथ राशि के भुगतान की मांग करते हुए चंडीगढ़ प्रशासन से नोटिस की प्राप्ति।यदि वादी उपरोक्त अवधि के भीतर मांगी गई राशि का भुगतान करने में विफल रहता है, तो चंडीगढ़ प्रशासन इसके बाद तीन महीने के भीतर विवादित संपत्ति की नीलामी कर सकता है।चंडीगढ़ प्रशासन को उचित कार्यवाही में भुगतान की गई राशि, यदि कोई हो, की वसूली के लिए चौथे प्रतिवादी के लिए यह हमेशा खुला रहता है।

(34) तदनुसार नियमित द्वितीय अपील स्वीकृत की जाती है।लागत के बारे में कोई आदेश नहीं।

आरएनआर

मुख्य न्यायाधिपति अरुण बी. सहारिया, और न्यायमूर्ति वी. के. बाली के समक्ष

भीम सैन प्रभाकर।-याचिकाकर्ता

बनाम

पीठासीन अधिकारी, औद्योगिक न्यायाधिकरण-एवं-श्रम न्यायालय, हिसार व अन्य।-उत्तरदाता

1996 का एल. पी. ए. सं. 59

25जनवरी, 2000

लेटर्स पेटेंट अपील, *1919*-- खंड *X*- भारत का संविधान, 1950-अनुच्छेद *226*-औद्योगिक विवाद अधिनियम, *1947*- धारा *2* (के), *10* और *33*-ए-कर्मचारियों को सेवा से बर्खास्त करना-श्रम न्यायालय ने *50* प्रतिशत पिछले वेतन के साथ बहाली का निर्देश देते हुए बर्खास्तगी को अवैध और गलत ठहराते हुए-कर्मचारी ने पूर्ण वेतन की गैर-मंजूरी के लिए रिट में पंचांट को चुनौती दी-विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट को खारिज कर दिया और श्रम न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि की-कर्मचारी ने अपने जबरन आलस्य की अवधि के दौरान श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों का प्रतिनिधित्व किया-लाभकारी रूप से कार्यरत-कर्मचारी जो पूर्ण वेतन का हकदार नहीं था-श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेशों को बरकरार रखा-अपील खारिज कर दी गई।

अभिनिर्धारित किया गया कि श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश ने कर्मचारी को उसकी बर्खास्तगी के आदेश को अमान्य करने के बाद उसे सेवा में बहाल करते हुए केवल 50 प्रतिशत वापस मजदूरी देने में पूरी तरह से न्यायसंगत थे।इसमें कोई संदेह नहीं है कि बर्खास्तगी के आदेश को दरकिनार करते हुए और कर्मचारी को बहाल करते समय सामान्य नियम पूर्ण वेतन प्रदान करना है और एकमात्र अपवाद जिसमें ऐसा आदेश यानी पूर्ण वेतन का आदेश नहीं दिया जाता है, वह है जब कर्मचारी लाभकारी रूप से कार्यरत हो।अपीलार्थी श्रम कानूनों से अच्छी तरह वाकिफ था और वह ट्रेड यूनियन में भी एक पद पर था।उन्होंने श्रमिकों के कल्याण से संबंधित सभी प्रासंगिक कानूनों से खुद को एक दशक से भी अधिक उनके लिए अपीयर होकर परिचित कराया था।

जब समाप्ति का आदेश पारित किया जाने लगा।उन्होंने पूरे समय श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष श्रमिकों की ओर से पेश होना जारी रखा और एक वैध धारणा कि उन्हें, कम से कम बर्खास्तगी का आदेश पारित होने के बाद, पारिश्रमिक दिया जा रहा था, अच्छी तरह से तैयार किया जा सकता है।श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश को यह मानते हुए उचित ठहराया गया कि श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष अपीलार्थी द्वारा की गई उपस्थिति अनावश्यक नहीं थी या दूसरे शब्दों में, यह नहीं कहा जा सकता था कि वह प्रासंगिक अवधि के दौरान कुछ भी अर्जित नहीं कर रहा था।

(पैरा 9)

आर. एस. मित्तल, वरिष्ठ अधिवक्ता, सुधीर मित्तल के साथ, याचिकाकर्ता की ओर से।
अधिवक्ता एच. एन. मेहतानी प्रतिवादीगण की ओर से।

निर्णय

न्यायमूर्ति वी. के. बाली

(1) श्रम न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए दृढ़ निष्कर्ष के मद्देनजर कि अपीलकर्ता-कर्मचारी 1978 से श्रम न्यायालयों और औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों का प्रतिनिधित्व कर रहा था, अपीलकर्ता के स्वयं के बयान के आधार पर, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि उसे औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 के प्रावधानों के उल्लंघन में 5 अक्टूबर, 1988 को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था, इसने 50 प्रतिशत वेतन वापस कर दिया, विद्वान एकल न्यायाधीश, श्रम न्यायालय द्वारा दिए गए पंचांट को चुनौती देने पर, 50 प्रतिशत बैक वेजिस से इनकार करने की सीमित सीमा तक, रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं पाई और इस प्रकार, उसे खारिज कर दिया।लेटर्स पेटेंट के खंड X के तहत कार्यपालक द्वारा दायर इस लेटर्स पेटेंट अपील में हमारे सामने जो एकमात्र सवाल उठाया गया है, वह यह है कि क्या अपीलार्थी अपनी तथाकथित आलस्य की अवधि के दौरान लाभकारी रूप से नियोजित नहीं था और इस प्रकार वह पूर्ण वेतन पाने का हकदार था।हालाँकि, इससे पहले कि हम वर्तमान अपील में

उठाए गए एकमात्र प्रश्न का उत्तर दें, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, वर्तमान अपील दायर करने की घटनाओं की पृष्ठभूमि देना उपयोगी होगा।

(2) वर्ष 1984-85 के लिए बोनस के भुगतान के संबंध में औद्योगिक प्रतिनियुक्ति अधिनियम, 1947 (जिसे बाद में अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है) की धारा 2 (के) के तहत एक औद्योगिक विवाद 1988 के संदर्भ संख्या 7 में न्यायाधिकरण के समक्ष लंबित था।इस विवाद की मुद्रा के दौरान, प्रत्यर्थी-प्रबंधन ने अधिनियम के तहत परिकल्पित अनुमति प्राप्त किए बिना कर्मचारी को सेवा से बर्खास्त कर दिया, इस प्रकार, अपीलार्थी को श्रम न्यायालय में अधिनियम की धारा 33-ए के तहत एक आवेदन दायर करने के लिए विवश किया, जिसके समक्ष औद्योगिक विवाद लंबित था।श्रम न्यायालय ने शिकायत को एक विवाद के रूप में माना जिसे अधिनियम की धारा 10 के तहत संदर्भित करते हुए, पंचांट

दिनांकित 5 अगस्त, 1993 को यह अभिनिर्धारित किया कि कर्मचारी को सेवा से बर्खास्त करना अवैध और गलत था।इस प्रकार, बर्खास्तगी के आदेश में प्रत्यर्थी प्रबंधन को सेवा की निरंतरता और अन्य परिणामी लाभों के साथ कर्मचारी को बहाल करने का निर्देश दिया गया था, लेकिन 50 प्रतिशत वापस मजदूरी के साथ जो पुरस्कार की तारीख से तीन महीने की अवधि के भीतर दो समान मासिक किश्तों में भुगतान किया जाना था, जिसमें विफल रहने पर कर्मचारी को पुरस्कार की तारीख से वास्तविक भुगतान की तारीख तक प्रति वर्ष @12% ब्याज का हकदार होना था।बाधित, प्रत्यर्थी-प्रबंधन ने 1993 की सिविल रिट याचिका संख्या 13358 दाखिल करके उपरोक्त पुरस्कार को चुनौती दी।इस बीच, चूंकि प्रत्यर्थी-प्रबंधन ने पुरस्कार को लागू नहीं किया, इसलिए कर्मचारी ने उक्त अधिनियम की धारा 33-सी (एल) के तहत राज्य सरकार का रुख किया और पुरस्कार के तहत प्रबंधन से देय धन की वसूली का दावा किया।हरियाणा के श्रम आयुक्त ने राज्य सरकार की शक्तियों का प्रयोग करते हुए 28 मार्च, 1994/ 12अप्रैल,1994 के आदेश के माध्यम से रुपये 71, 638.55 मय ब्याज @12 प्रतिशल की वसूली का प्रमाण पत्र जारी किया। इस वसूली प्रमाणपत्र को प्रतिवादी-प्रबंधन द्वारा 1994 की सिविल रिट याचिका संख्या 16522 के माध्यम से चुनौती दी गई थी।अपीलार्थी, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, ने 1993 की सिविल रिट याचिका संख्या 15834 के माध्यम से पुरस्कार को सीमित सीमा तक, यानी पूर्ण वेतन की गैर-मंजूरी के माध्यम से भी चुनौती दी।दोनों लेखन।अर्थात्, प्रत्यर्थी-प्रबंधन द्वारा दायर एक और अपीलार्थी द्वारा दायर दूसरा, विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष निर्णय के लिए आया, जिसने किसी भी रिट याचिका में कोई योग्यता नहीं पाई और उसे खारिज कर दिया-29 मई, 1995 के आदेश के अनुसार।हम प्रत्यर्थी-प्रबंधन द्वारा दायर रिट याचिकाओं से चिंतित नहीं हैं जो अब तक अंतिम रूप ले चुके हैं।

(3) श्री आर.एस.मित्तल, विद्वान अधिवक्ता अपीलार्थी का प्रतिनिधित्व करते हुए जोरदार तर्क दिया कि सामान्य नियम जो समाप्ति के आदेश को अमान्य करके बहाली का अनुसरण करता है, वह है पूर्ण वेतन देना।इस नियम से विचलित होने वाली परिस्थितियों को प्रबंधन को दिखाना होगा।केवल यह तथ्य कि अपीलार्थी श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों का प्रतिनिधित्व कर रहा था, एक लाभकारी रोजगार नहीं कहा जा सकता है और इसलिए, श्रम न्यायालय के आदेश, जिसकी विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पुष्टि की गई है, में संशोधन की आवश्यकता है ताकि अपीलार्थी को पूर्ण वेतन प्रदान किया जा सके।मांगी गई राहत के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय के दो फैसलों पर निर्भरता रखी गई है, राजिंदर कुमार किन्द्रा बनाम दिल्ली प्रशासन (1) और ओम प्रकाश गोयल बनाम हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम लिमिटेड शिमला *(2)*।लेकिन इससे पहले कि हम दो न्यायिक उदाहरणों के तथ्यों पर ध्यान दें,

(1) ए.आई.आर. 1984 एस. सी. 1805

(2) 1991 प्रयोगशाला. आई. सी. 1414

हमारे समक्ष उद्धृत, और यह पता लगाने के लिए कि क्या वे अपीलार्थी के कारण का समर्थन करते हैं, अपीलार्थी के बयान को देखना उपयोगी होगा जिसे श्रम न्यायालय द्वारा केवल 50 प्रतिशत वापस मजदूरी देने में विचार में लिया गया था और यह भी कि वह इस मुद्दे को निर्धारित करने के लिए कैसे आगे बढ़ा।50 प्रतिशत वापस मजदूरी के भुगतान के संबंध में श्रम न्यायालय के निष्कर्षों की पुष्टि करने में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा की गई टिप्पणियों पर ध्यान देना भी प्रासंगिक होगा।अपीलार्थी-कर्मचारी से यह पूछे जाने पर कि क्या यह सही है कि वह 1978 से श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों का प्रतिनिधित्व कर रहा था, अपीलार्थी ने सकारात्मक उत्तर दिया।

(4) अपीलार्थी के बयान के आधार पर, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, विद्वान श्रम न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी कीः—

> "श्री बी. एस. प्रभाकर, प्रथम विश्व युद्ध के बयान में यह आया है कि वह विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों की ओर से 1978 से श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरणों में श्रमिकों के ए. आर. के रूप में पेश हो रहे हैं।इस तरह, श्रमिक द्वारा यह स्वीकार किया जाता है कि वह श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरण में लाभप्रद रूप से श्रमिक का प्रतिनिधित्व कर रहा है।इन कारकों को ध्यान में रखते हुए, मेरी राय है कि दो समान मासिक किश्तों में देय श्रमिक को 50 प्रतिशत वापस मजदूरी देना एक उपयुक्त मामला है और ये 50 प्रतिशत वापस मजदूरी 5 अक्टूबर, 1988 से देय होगी, जो आज तक बर्खास्तगी की तारीख है।

(5) जब मामला विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष आया, तो उन्होंने इस प्रकार टिप्पणी करते हुए मामले को आगे बढ़ायाः—

अब कर्मचारी द्वारा दायर रिट याचिका पर आते हुए, श्रम न्यायालय ने बर्खास्तगी के आदेश को दरकिनार करते हुए उनकी बहाली का निर्देश दिया है, लेकिन 50 प्रतिशत वेतन के साथ।50 मजदूरी का प्रतिशत इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया कि श्रमिक ने न्यायाधिकरण के समक्ष पेश होते हुए अपनी जिरह में स्वीकार किया कि वह वर्ष 1988 से श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों का प्रतिनिधित्व कर रहा था।श्रमिक द्वारा की गई इस स्वीकारोक्ति को ध्यान में रखते हुए, श्रम न्यायालय ने यह मान कर न्यायसंगत ठहराया कि वह अपने जबरन आलस्य की अवधि के दौरान लाभकारी रूप से कार्यरत था।मजदूरी का अधिनिर्णय अनिवार्य रूप से प्रत्येक मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए श्रम न्यायालयों द्वारा विवेकपूर्ण तरीके से किया जाना चाहिए।तत्काल मामले में विवेकाधिकार के प्रयोग को मनमाना नहीं कहा जा सकता है ताकि संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने असाधारण अधिकार क्षेत्र के प्रयोग में इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप का आह्वान किया जा सके।

(6) अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा निर्भर किए गए राजिंदर कुमार किन्द्रा और ओम प्रकाश गोयल के मामलों (ऊपर दिए गए) में दो न्यायिक उदाहरण, वास्तव में इस मामले के तथ्यों पर लागू होते हैं ताकि उसे पूर्ण वेतन देने का हकदार माना जा सके।राजिंदर कुमार किंद्र के खिलाफ 11 दिसंबर, 1975 को आरोप पत्र दायर किया गया था।जांच अधिकारी, जिन्हें आरोपों की जांच के लिए नियुक्त किया गया था, ने 22 जून, 1976 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और उन्हें अपने कर्तव्यों के निर्वहन में घोर लापरवाही और कदाचार का दोषी ठहराया।श्रमिकों ने अन्य बातों के साथ-साथ एक औद्योगिक विवाद उठाया, जिसमें तर्क दिया गया कि पूछताछ अधिकारी के निष्कर्ष विकृत थे।श्रम न्यायालय के पीठासीन अधिकारी ने अंततः कहा कि श्री राजिंदर कुमार किंद्र की सेवाओं को अवैध या अन्यायपूर्ण रूप से समाप्त नहीं किया गया था, बल्कि उनके खिलाफ आरोप सफलतापूर्वक साबित होने के कारण और यह भी कि जांच की कार्यवाही प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों से दूषित नहीं हुई थी।.कर्मचारी ने दिल्ली उच्च न्यायालय में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट याचिका दायर की, जिसमें पंचांट की शुद्धता, वैधता और वैधता पर सवाल उठाया गया।उच्च न्यायालय की खंड पीठ ने रिट याचिका को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि मामला साक्ष्य के मूल्यांकन पर निर्भर करता है और अदालत संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत इसका पुनर्मूल्यांकन नहीं कर सकती है।इसके कारण कर्मचारी को सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका दायर करनी पड़ी।विवादित आदेश को माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निष्कर्षों के मद्देनजर कायम नहीं रखा जा सका कि "जहां बर्खास्तगी के आदेश को घरेलू जांच में एक निष्कर्ष पर बनाए रखने की मांग की जाती है, जो विकृत दिखाई देता है और जांच को विवेक के गैर-अनुप्रयोग से पीड़ित होने के रूप में दूषित किया जाता है, तो अदालत के लिए एकमात्र रास्ता खुला है कि इसे दरकिनार कर दिया जाए और परिणामस्वरूप बहाली की राहत दी जानी चाहिए जहां इसे देने के खिलाफ कुछ भी नहीं था।"इसके बाद मजदूरी वापस करने का सवाल उठा।कर्मचारी ने अपनी जिरह में स्वीकार किया था कि अपनी सेवा की समाप्ति की तारीख से नौकरी से जबरन अनुपस्थिति के दौरान, वह अपने ससुर तारा चंद की मदद करके अपने परिवार का पालन-पोषण कर रहा था, जिनके पास एक कोयला डिपो था और वह और उनके परिवार के सदस्य अपने ससुर के साथ रहते थे और उनके पास रखरखाव का कोई वैकल्पिक स्रोत नहीं था।प्रॉम्प्ट को माननीय सर्वोच्च न्यायालय से एक जवाब मिला कि "नियोक्ता ने इस मामले में घोर विकृति के साथ संपर्क किया था और आगे कहा कि यदि नियोक्ता, सेवा के पूरी तरह से अस्थिर समाप्ति आदेश के बाद, इस आधार पर मजदूरी वापस करने से इनकार करना चाहता था कि अपीलार्थी और उसके परिवार के सदस्य अपीलार्थी के ससुर के साथ रह रहे थे क्योंकि रखरखाव का कोई वैकल्पिक स्रोत नहीं था और इस अवधि के दौरान अपीलार्थी अपने ससुर तारा चंद की मदद कर रहा था, जिनके पास कोयला डिपो था, तो यह नहीं कहा जा सकता था कि अपीलार्थी लाभप्रद रूप से कार्यरत था।"आगे यह अभिनिर्धारित किया गया कि "यह प्रस्तुतिकरण के समर्थन में एकमात्र सबूत था कि सेवा से उनकी जबरन अनुपस्थिति के दौरान

x>

वह लाभकारी रूप से कार्यरत था और इसे लाभकारी रोजगार नहीं कहा जा सकता था ताकि पिछले वेतन के दावे को अस्वीकार किया जा सके।उपरोक्त मामले में श्रमिक को पूर्ण वेतन का हकदार माना गया था।

(7) ओम प्रकाश गोयल के मामले (ऊपर) में, कर्मचारी अपनी सेवाओं को समाप्त करने के बाद से एक वकील के रूप में काम कर रहा था।उनके द्वारा दायर किए गए जवाब में उन्होंने कहा कि वह उस पेशे में ज्यादा कमाई नहीं कर रहे थे और उन्होंने कर्ज लिया था।प्रबंधन का प्रतिनिधित्व करने वाले वकील का यह तर्क था कि चूंकि कर्मचारी एक वकील के रूप में काम कर रहा था, इसलिए उसे किसी भी स्थिति में वेतन वापस देने का सवाल ही पैदा नहीं होता था और अन्यथा भी इस दूरी पर एक वकील के रूप में उसने जो कमाई की थी, उसकी एक घुमावदार जांच नहीं हो सकती थी।हालाँकि, इस मोड़ पर कर्मचारी ने एक और हलफनामा दायर किया कि 1985 के बाद से उनकी कुल आय केवल रु। 15, 550 और इन सभी वर्षों के दौरान उन्हें कोई अन्य आय नहीं मिली थी।कर्मचारी ने एस. एम. सैय्यद बनाम बड़ौदा नगर निगम (3) मामले में उच्चतम न्यायालय के पहले के एक फैसले पर भरोसा किया, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसी तरह की परिस्थितियों में मजदूरी वापस करने का आदेश दिया था।

(8) उच्चतम न्यायालय ने तब कहा कि हस्तगत मामले में, कर्मचारी द्वारा हलफनामे दायर किए गए थे जिसमें कहा गया था कि वह अक्टूबर, 1982 में अपने नामांकन के बाद से आयकर अधिवक्ता के रूप में काम कर रहे थे।लेकिन उन्होंने दावा किया कि उन्हें अपना पहला संक्षिप्त विवरण वर्ष 1985 में मिला था।इन कथनों का दूसरे पक्ष ने खंडन किया।मामले के उपरोक्त तथ्यों पर, सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि "वह एक बारीकी से जांच नहीं कर सकता है और न ही निगम के लिए उस आय का पता लगाना संभव होगा जो याचिकाकर्ता को एक अधिवक्ता के रूप में प्राप्त हुई होगी और कई अभेद्य और अनुमान भी थे।"इन परिस्थितियों में, दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व करने वाले वकील को समस्या को हल करने के लिए एक सुझाव देने के लिए कहा गया था।कर्मचारी का प्रतिनिधित्व करने वाले वकील ने प्रस्तुत किया कि भले ही संबंधित अवधि को जांच लंबित रहने तक निलंबन के रूप में माना जाना हो, लेकिन कर्मचारी अपनी बहाली तक निर्वाह भत्ते का हकदार होता और कम से कम इस तरह की स्थिति में वापस मजदूरी देने का मानदंड होना चाहिए।सर्वोच्च न्यायालय ने इसे उचित और निष्पक्ष सुझाव माना।इस प्रकार, कर्मचारी को एक वकील के रूप में अपने नामांकन की तारीख तक पूर्ण वेतन का हकदार ठहराया गया था।उनके नामांकन की तारीख से बहाली की तारीख तक उन्हें प्रति माह निर्वाह भत्ते के आधे की दर से बैक वैग्स का हकदार ठहराया गया था और उस आधार पर कुल राशि की गणना की जानी थी।इसमें से रु. की आय। एक वकील के रूप में उनके द्वारा अर्जित 15,550 का अनुमान लगाया जाना था और शेष राशि कर्मचारी को दी जानी थी।,

(3) 1984 प्रयोगशाला। आई. सी. 1446

(9) अपीलार्थी के अधिवक्ता श्री आर.एस.मित्तल और प्रतिवादी प्रबंधन के लिए विद्वान वकील श्री एच. एन. मेहतानी को सुनने के बाद और मामले के अभिलेखों को अवलोकन करने के बाद, हमारा विचार है कि श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश ने कर्मचारी को केवल 50 प्रतिशत वेतन वापस देने में पूरी तरह से उचित थे, जबकि उसकी बर्खास्तगी के आदेश को अमान्य करने के बाद उसे सेवा में बहाल कर दिया।इसमें कोई संदेह नहीं है कि बर्खास्तगी के आदेश को दरकिनार करते हुए और कर्मचारी को बहाल करते समय सामान्य नियम पूर्ण वेतन देना है और एकमात्र अपवाद जब ऐसा आदेश यानी पूर्ण वेतन का आदेश नहीं दिया जाता है, तब होता है जब कर्मचारी लाभप्रद रूप से कार्यरत हो।यह भी विवादित नहीं हो सकता है कि लाभकारी रोजगार ऐसा होना चाहिए जिसमें निश्चितता, स्थिरता और निरंतरता का कुछ तत्व होना चाहिए।दूसरे शब्दों में, लाभकारी रोजगार का मतलब यहाँ एक विषम नौकरी और वहाँ एक विषम नौकरी चुनना नहीं हो सकता है।जबकि, यह सच हो सकता है, जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, कि लाभकारी रोजगार में निरंतरता का कुछ तत्व होना चाहिए, यह भी उतना ही सच है कि यह आवश्यक नहीं है कि यह स्थायी प्रतिष्ठान में एक नियमित कर्मचारी के काम करने के समान हो।उदाहरण के लिए, यदि निश्चितता, स्थिरता और निरंतरता को सरकारी या निजी क्षेत्र में एक स्थायी कर्मचारी के रूप में संरक्षित किया जाना चाहिए, तो सभी पेशेवरों, चाहे वे वकील हों, वास्तुकार हों, डॉक्टर हों, या उस मामले के लिए, यहां तक कि जो कोई भी व्यापार करते हैं, उन्हें ऐसा माना जाएगा जैसे कि कुछ नहीं कर रहे हैं और इस प्रकार, कुछ भी नहीं कमा रहे हैं।हमारा सामना एक ऐसे मामले से होता है जिसमें अपीलार्थी, अपने स्वयं के प्रदर्शन के अनुसार, हरियाणा आई. एन. टी. यू. सी. का 1977-78 से 1994-95 तक पदाधिकारी था और औद्योगिक न्यायाधिकरणों और श्रम न्यायालयों के समक्ष मामलों में विभिन्न कामगारों की सहायता कर रहा था।(रिट याचिका के पैरा 8 का संदर्भ दिया जा सकता है)।इसमें कोई संदेह नहीं है कि अपीलकर्ता, पहली बार रिट अदालत के समक्ष, आगे कहता है कि वह बिना किसी पारिश्रमिक के श्रमिकों की ओर से पेश हो रहा था, लेकिन यदि यह बिल्कुल भी सच है, तो यह केवल उस समय तक हो सकता है जब वह प्रतिवादी-प्रबंधन के रोजगार में था।उनकी सेवाओं को समाप्त करने के बाद और जब तक उन्हें बहाल नहीं किया गया, तब तक संभवतः यह कल्पना नहीं की जा सकती कि वह लापरवाह लग रहे थे।इस प्रकार, इस मामले के तथ्यों से पता चलता है कि अपीलार्थी श्रम कानूनों से अच्छी तरह वाकिफ था और वह ट्रेड यूनियन में भी एक पद पर था।जब बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया तो उन्होंने एक दशक से अधिक समय तक श्रमिकों की ओर से पेश होकर उनके कल्याण से संबंधित सभी प्रासंगिक कानूनों से खुद को परिचित कराया था।उन्होंने पूरे समय श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष श्रमिकों की ओर से पेश होना जारी रखा और जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, एक वैध धारणा है कि कम से कम बर्खास्तगी का आदेश पारित होने के बाद उन्हें पारिश्रमिक दिया जा रहा था।अपीलार्थी द्वारा विवादग्रस्त अवधि के दौरान किया गया इस तरह का कार्य, अर्थात उसकी सेवाओं को समाप्त करने की तारीख से उसे सेवा में बहाल करने का आदेश पारित होने तक, उस रूप में और उस समय उपलब्ध विषम नौकरियों को करते हुए आजीविका कमाना नहीं कहा जा सकता है।

श्रम न्यायालय और विद्वान एकल न्यायाधीश, हमारे विचार में, यह मानने में उचित थे कि श्रम न्यायालय/औद्योगिक न्यायाधिकरणों के समक्ष अपीलार्थी द्वारा की गई उपस्थिति अनावश्यक नहीं थी या दूसरे शब्दों में, यह नहीं कहा जा सकता था कि वह प्रासंगिक अवधि के दौरान कुछ भी अर्जित नहीं कर रहा था।

(10) अब राजिंदर कुमार किंद्र के मामले (उपरोक्त) में मामले के तथ्यों पर आते हुए, यह कहना पर्याप्त है कि उसमें काम उनके ससुर के साथ रहना और कोयला डिपो में उनकी मदद करना था।यह दिखाने के लिए कोई सबूत नहीं था कि कर्मचारी द्वारा अपने ससुर को दी गई मदद वेतन या पारिश्रमिक के बदले में थी।अधिक से अधिक, ससुर, बदले में, कर्मचारी और उसके परिवार को बनाए रखते थे।प्रबंधन द्वारा यह याचिका दायर की गई कि श्रमिक को ऐसी स्थिति में लाभकारी रूप से नियोजित किया जा रहा है, स्वाभाविक रूप से सर्वोच्च न्यायालय द्वारा टिप्पणियों का सामना करना पड़ा, जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है।

(11) ओम प्रकाश गोयल के मामले (ऊपर) के तथ्य, अपीलार्थी के कारण का समर्थन करने के बजाय, हमारे विचार में, उसके खिलाफ हो जाएंगे।उक्त मामले और हाथ में मौजूद मामले में अंतर केवल इतना है कि पूर्व कर्मचारी ने एक वकील के रूप में काम करना शुरू कर दिया था और बाद वाले कर्मचारी ने श्रम न्यायालयों/औद्योगिक न्यायाधिकरणों में विभिन्न कंपनियों के श्रमिकों का उनके अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में प्रतिनिधित्व किया था।यह अंतर, अधिक महत्व का प्रतीत नहीं होता है क्योंकि दोनों द्वारा किया गया कार्य समान है, भले ही उनके संचालन का क्षेत्र अलग-अलग हो।

(12) ऊपर की गई चर्चा को देखते हुए, हम इस अपील में कोई योग्यता नहीं पाते हैं और इसे खारिज करते हैं, हालांकि, पक्षकार अपना खर्चा स्वयं वहन करेंगे।

एस.सी.के.

अस्वीकरण *:* स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय याचिकाकर्ता के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

नेहा चांद,
प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी,
गुरूग्राम, हरियाणा

न्यायमूर्ति इकबाल सिंह के समक्ष

जगमेल सिंह।-याचिकाकर्ता

बनाम

अमृत कौर व अन्य।-उत्तरदाता

1997 का सी. आर. सं. 3990

3नवंबर, 1999

सिविल प्रक्रिया संहिता, *1908*-आदेश *1* नियम *10* -आवश्यक पक्ष-इम्प्लीडिंग ऑफ़-क्या पेंडेंट लाइट ख़रीददार- एक आवश्यक पक्षकार है।

अभिनिर्धारित किया कि मुकदमे में एक पक्ष के रूप में किसी व्यक्ति को आरोपित करने के प्रश्न का निर्णय करते समय, क्या ऐसा व्यक्ति जिसने होने के लिए आवेदन किया है